स्पष्ट हो नियामकों की भूमिका

drishtiias.com/hindi/printpdf/articulating-the-role-of-regulators

संदर्भ

हाल ही में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा 'एस्सार स्टील' (Essar steel) को दिवालियापन कार्रवाईयों के घेरे में लेने को गुजरात हाई कोर्ट में चुनौती दी गई थी जिसे न्यायालय ने खारिज कर दिया है। इस याचिका में राष्ट्रीय कंपनी कानून प्राधिकरण (National Company Law Tribunal –NCLT) में बैंकरप्सी कोड के अंतर्गत की जाने वाली कार्यवाहियों को चुनौती दी गई थी।

न्यायालय ने भले ही याचिका खारिज़ कर दिया है लेकिन क्या भारतीय रिज़र्व बैंक एक अर्द्ध-न्यायिक निकाय के सामने शर्तें थोप सकता है? यह एक अहम् सवाल है। गुजरात उच्च न्यायालय ने भी सुनवाई के दौरान यह पूछा कि क्या रिज़र्व बैंक के पास अधिकरणों के नियमन की शक्तियाँ मौजूद हैं?

समस्याएँ और चुनौतियाँ

- विदित हो कि राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित अध्यादेश के ज़रिये रिज़र्व बैंक को वह शक्ति दी गई है जिसमें उसे फँसे हुए कर्ज़ की वसूली के बारे में वाणिज्यिक बैंकों को निर्देश देने का अधिकार मिला है। यह प्रावधान केंद्रीय बैंक की भूमिका की स्पष्टता को भी धूमिल कर देता है। यह एकतरफा नीतिगत समाधान का एक उदाहरण है।
- दरअसल, यह रिज़र्व बैंक का दायित्व नहीं है कि वह वाणिज्यिक बैंकों के लिये बाध्यकारी निर्णय ले, लेकिन अध्यादेश द्वारा शक्तियों प्राप्त करने के बाद रिज़र्व बैंक को लगने लगा है कि उसे राष्ट्रीय कंपनी कानून न्यायाधिकरण (एनसीएलटी) को भी उसकी गतिविधियों के संबंध में दिशानिर्देश देना चाहिये।
- बैंकों की कार्यकारी भूमिका सुनिश्चित करने का रिज़र्व बैंक को दायित्व सौंपने जैसी प्रवृत्ति अन्य क्षेत्रों में भी आ सकती है। बीमा क्षेत्र के नियामक को भी बीमा कंपनियों को संचालित करने के लिये कहा जा सकता है। इसी तरह बाज़ार नियामक सेबी भी म्यूचुअल फंड संचालित कर सकता है।
- सबसे गंभीर समस्या यह है कि अध्यादेश के ज़रिये लाए गए नियमों में यह प्रावधान है कि निगरानी एजेंसियाँ कुछ साल बाद रिज़र्व बैंक का दरवाजा खटखटा सकती हैं। एजेंसियाँ यह कह सकती हैं कि रिज़र्व बैंक ने अपने दायित्व के निर्वहन के दौरान कुछ गलत फैसले लिये थे।
- गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों (एनपीए) की वसूली के मामले में प्रदर्शन खराब रहने और इनमें से कुछ परिसंपत्तियों को सस्ते में खरीदने वाला अगर लाभ कमाने लगता है तो केंद्रीय जाँच ब्यूरो (सीबीआई) भविष्य में यह भी कह सकता है कि रिज़र्व बैंक भी भ्रष्टाचार की चपेट में आ गया है।

क्या हो आगे का रास्ता?

- एनसीएलटी का गठन अर्द्ध-न्यायिक फैसले ले पाने में सक्षम अधिकरण के तौर पर किया गया था, लेकिन इसके पीछे यह सोच भी थी कि मौजूदा संगठनों के प्रदर्शन पर असर डालने वाली समस्याओं को दूर किया जाए।

- दरअसल, न्याय प्रशासन के निष्प्रभावी होने से सरकारों ने संसद के ज़रिये ऐसे कानून पारित कराए हैं, जिनमें नियामकों को सशक्त करके उन्हें एक तरह से न्यायिक भूमिका दे दी गई है, लेकिन इस तरह की भूमिकाएँ निभाने के लिये ज़रूरी प्रशिक्षण देने और क्षमता विकसित करने पर कभी भी ध्यान नहीं दिया गया।
- ऐसे प्रयोगों से पैदा हुई निराशा में सरकारों ने कुछ और खराब प्रयोग किये, जिसका नतीजा यह हुआ कि सरकार के अंगों की भूमिका ही धूमिल पड़ती जा रही है। इसके बहुतेरे उदाहरण हैं। पूंजी बाज़ार के नियामक सेबी को एक कार्यकारी संगठन होते हुए भी बेहिसाब शक्तियाँ दी गई हैं। उसे गंभीर अर्द्ध-न्यायिक फैसले भी लेने का अधिकार है, जबकि उसके पास कोई न्यायिक प्रशिक्षण नहीं है।
- इसी तरह गंभीर दायित्वों के निर्वहन के लिये गठित अर्द्ध-न्यायिक अधिकरणों को भी संसाधनों की कमी का सामना करना पड़ता है। राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय न्यायाधिकरण को कंपनी कानून के साथ ही प्रतिस्प्रद्धा कानून और दिवालिया कानून से जुड़े मामलों में भी अपीलीय अधिकरण की भूमिका दे दी गई है।
- लेकिन ज़मीनी हकीकत यह है कि इस अधिकरण में केवल दो सदस्य हैं, जबकि एक सदस्य की जगह खाली है। इसी तरह बीमा नियामक के फैसलों के खिलाफ अपील सुनने के लिये गठित प्रतिभूति अपीलीय पंचाट में कभी भी सारे सदस्यों की नियुक्ति सरकार नहीं कर पाई है।
- अतः सरकार को चाहिये कि वह नियामकों को प्रशिक्षण दे, उनकी क्षमता वृद्धि पर ध्यान दे। न्यायिक शक्तियों का सही क्रियान्वयन हो, इसके लिये नियामकों को न्यायिक प्रशिक्षण भी देना चाहिये।

निष्कर्ष

दिवालिया कानून में एक खामी यह है कि कोई भी कर्ज़दाता वसूली की प्रक्रिया शुरू कर सकता है। इससे न केवल कर्ज़दार कंपनी के निदेशक मंडल की शक्तियाँ निलंबित हो जाएंगी, बल्कि कर्ज़ वसूली पर भी रोक लग जाएगी। अतः हमें इस प्रकार की कमियों को दूर करना होगा। दिवालिया कानून के अलावा अन्य उपलब्ध उपायों पर भी गौर किये जाने की ज़रूरत है। लगातार बढ़ते एनपीए से निपटने के लिये सरकार को आनन-फानन में कुछ भी करने के बजाय व्यावहारिक कदम उठाना चाहिये।

विदित हो कि एनपीए से निपटने के लिये बैड बैंक की अवधारणा अहम मानी जा रही थी, जो कि अब चर्चा से ही गायब है। किसी व्यवस्था में सुधार लाने के लिये आमूलचूल बदलाव वाली नीतियों से समस्याओं का समाधान निकलने के बजाए उनमें बढ़ोतरी भी हो सकती है। इन बातों को ध्यान में रखकर ही हमें आगे बढ़ना चाहिये।

क्या है बैड बैंक?

- बैड बैंक' एक आर्थिक अवधारणा है, जिसके अंतर्गत आर्थिक संकट के समय घाटे में चल रहे बैंकों द्वारा अपनी देयताओं को एक नए बैंक को स्थानांतरित कर दिया जाता है। ये बैड बैंक कर्ज़ में फँसे बैंकों की राशि को खरीद लेगा और उससे निपटने का काम भी इसी बैंक का होगा।
- जब किसी बैंक की गैर-निष्पादनकारी परिसंपत्तियाँ सीमा से अधिक हो जाती हैं, तब राज्य के आश्वासन पर एक ऐसे बैंक का निर्माण किया जाता है, जो मुख्य बैंक की देयताओं को एक निश्चित समय के लिये धारण कर लेता है।
- विदित हो कि बैड बैंक एआरसी यानी परिसंपत्ति पुनर्गठन कंपनियों की तरह काम करेगा। बैड बैंक, एक ऐसा बैंक होगा, जो दूसरे बैंकों के डूबते कर्ज़ को खरीदेगा। ध्यातव्य है कि बैड बैंक का नाम 'पब्लिक सेक्टर एसेट रिहैबिलिटेशन एजेंसी' यानी पीएसआरए होगा और यह प्रयोग जर्मनी, स्वीडन, फ्रांस जैसे देशों में सफल रहा है।
- दरअसल बैंकों (खासकर सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों) की गैर-निष्पादनकारी परिसंपत्तियाँ तेजी से बढ़ी हैं। बैड बैंक के आने से अन्य बैंकों से डूबते कर्ज़ को वसूलने का दबाव हट जाएगा और वे नए ऋण देने पर ध्यान केन्द्रित कर पाएंगे।
- बैंकों को अपने डूबते कर्ज़ बैड बैंक को बेचने की सुविधा मिलेगी। डिफाल्टर कंपनियों की संपत्ति बेचने के काम में तेज़ी आएगी। बैंक अधिकारी परिसंपत्तियों की ज़ब्ती की जगह बैंकिंग गतिविधियों को सुचारू ढंग से चला पाएंगे।